तेरी मेरी सबकी बात

धर्म बनाम सामाजिक समस्या

लगभग एक सप्ताह हुआ, मेरी निकटतम घनिष्ठ मित्र डॉ. माहसीमा मसूद अचानक चल बसीं। वे अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में प्रौढ़ एवं सतत्–अनौपचारिक शिक्षा केन्द्र की निदेशक थीं। मेरे साथ 'भारत ज्ञान विज्ञान समिति' संस्था तथा जन विज्ञान आंदोलन से भी जुड़ी थीं। फिलवक्त इसकी राष्ट्रीय कमेटी की सदस्य थीं। ज्ञान विज्ञान समिति–उ.प्र. की उपाध्यक्ष थीं जहाँ मैं पिछले कई वर्षों से अध्यक्ष के रूप में काम कर रही हूँ।

मेरा कोई इरादा इस वक्त उनको शोक श्रद्धांजलि देने का नहीं है। यह न उचित मौका है और न ही मंच है। दरअसल इन दिनों तेज़ी से जिस प्रकार की अनर्गल घटनाएँ घट रही हैं और कुत्सित बयानबाजी हो रही है, इस सिलसिले में उनसे जुड़ा एक प्रसंग याद आ गया है। आजकल रोज अखबारों, टी.वी. में बयानबाजी का शोर हो रहा है। कोई चार बच्चे, कोई पाँच बच्चे पैदा करो–का हुक्म दे रहा है। बच्चे आपस में संतो–संगठनों के बीच बाँटे जा रहे हैं। कोई डंडा लेकर लड़के–लड़कियों को दौड़ा–हाँक रहा है। इतिहास–भूगोल–विज्ञान बदले जा रहे हैं। अजब शोर गुल और हड़बड़ी का माहौल है। राजनेता तो शासक बनकर सत्ता पर काबिज हो गये हैं। उनकी डोरें जिन संगठनों–दलों से बंधी रही हैं उनके नेता–कार्यकर्त्ता... वे फ्रस्ट्रेट हो रहे हैं। उन्हें तो कुछ नहीं मिला। इतने दिनों से वे ज़मीन तैयार कर रहे थे, बीज बो रहे थे, हवाओं में नफ़रत घोल कर वातावरण बना रहे थे... अब राजनेता कुर्सियों पर काबिज होकर 'ऐश' कर रहे हैं और परिषदों, दलों, मंचों, वाहिनियों के नेता, नेतानियाँ, साधू और साध्वियाँ... वो तो ठन–ठन गोपाल ही रह गये। इसीलिये चीख–पुकार जारी है कि हम भी हैं लाइन में... हमारी ओर भी तो देखो.. . हमें भी कुछ तो दो...।

मुश्किल यह है कि सत्ता–प्राप्ति के लिये एजेन्डा अबकी दूसरा था। मंहगाई–बेरोजगारी से लस्त–पस्त और (बड़े घोटाले तो छोड़ दीजिये) रोज़मर्रा के जीवन में झेल रहे भ्रष्टाचार से त्रस्त लोगों को इन सबसे निजात दिलाने, सुख के दिनों के सपने दिखाते हुए देश के चहुँमुखी विकास के वादे पर चुनाव जीता गया था। हालांकि ताश की गड्डी में भगवा ट्रम्प कार्ड भी था लेकिन उसका सावधानी से, सिर्फ जरूरत भर इस्तेमाल किया गया। यही कूटनीति है और राजनीति इसी को कहते हैं। अब प्रधानमंत्री मोदी तो पलटकर भी नहीं देख रहे इन सिंघलों, तोगड़ियों,

साधु–साध्वियों की ओर... उन्हें दिल्ली में चुनाव जीतना है... कश्मीर में सरकार बनानी है। इस शोरगुल में उनके भाषण जनता कैसे सुनेगी, समझेगी।

हमारे अलीगढ़ में हर साल नुमायश लगती है। हालांकि अब तो यहाँ भी महानगरों की तरह मॉल–संस्कृति तेजी से विकसित हुई है लेकिन एक जमाने में यह नुमायश अलीगढ़ की पहचान और यहाँ के लोगों की धड़कन हुआ करती थी। दूर–दराज के शहरों, यहाँ तक कि इंग्लैंड–अमरीका में रहने वाले अलीगढ़ के बाशिंदे नुमायश के दिनों में ही घर–वापसी का कार्यक्रम बनाया करते थे। यूँ इस नुमायश का क्रेज़ अब भी बना हुआ है। दोस्तियाँ निभाने का, नयी दोस्तियाँ करने का मौका अभी भी यहाँ मिलता है। वीमेन्स कॉलेज–हॉस्टल की लड़कियों के डिनर के दिन अभी भी लड़कों की विशेष भीड़ रहती है और साथ ही सुरक्षा व्यवस्था भी चाक–चौबंद रहती है। दूरदराज गाँव–देहात के लोगों के लिये यह नुमायश अभी भी वर्ष की एक महत्त्वपूर्ण घटना होती है। हाँ, तो बात ये है कि इस नुमायश में एक हुल्लड़ बाजार हुआ करता है। नुमायश मैदान के एक बड़े क्षेत्र में छोटे–छोटे तंबुओं के भीतर तरह–तरह के तमाशे, बायस्कोप दिखाये जाते हैं। कहीं काला जादू, कहीं स्वर्ग–नर्क। कहीं एक लड़की फिल्मी अंदाज में नाच रही है और लोगों की भीड़ के साथ संगीत चीख रहा है तो वहीं पास में झूले वाले तरह–तरह की आवाजों के साथ लोगों को बुला रहे हैं। आसपास ही सरकस का तंबू, उसका अलग प्रचार। दिलचस्प यह कि हर जगह माइक से गाने, ग्राहकों के लिये बुलावा और अपने शो का प्रचार...। सारी ध्वनियाँ मिलकर अजीबो–गरीब कोलाज बनाती हैं। कभी रोना–गाना, कभी चीख–पुकार... जैसी आवाजों से गूँजता कोलाहलपूर्ण वातावरण। लोगों को यहाँ भी मज़ा आता है। यह प्रसंग इसलिये कि मुझे लगता है आजकल हमारे देश–समाज में भी ऐसा ही हुल्लड़ बाज़ार चल रहा है। तोगड़िया जी साइंसदाँ हैं, डॉक्टर हैं। हैरानी है जब उन्होंने फिर से यही बयान दिया कि मुसलमान देश को गरीब बना रहे हैं... एक–एक मुसलमान की चार बीवियाँ और हर एक से दस–दस बच्चे। यानि गरीबी उन्मूलन को मुसलमान उन्मूलन में बदल दिया गया। पूँजी निवेश, अमरीकी सहयोग, चीन–जापान से आर्थिक समझौते–सब व्यर्थ की मशक्कत। अर्थव्यवस्था और मँहगाई का इतना सरलीकरण अब तक किसी की समझ में नहीं आया। मोदी जी को अब तक किसी ने उनका नाम वित्त मंत्री के रूप में क्यों नहीं सुझाया।

उन दिनों हम लोग भारत–ज्ञान विज्ञान समिति की ओर से साक्षरता और स्वास्थ्य पर ग्रामीण क्षेत्रों में और मुख्यतः स्त्री–बच्चों पर केंद्रित कार्यक्रम कर रहे थे। केंद्र में एन.डी.ए. सरकार थी अतः तोगड़िया सरीखे प्रवचन–भाषण अक्सर सुनने को मिल जाते थे। अलीगढ़ के एक गाँव में हमारा कार्यक्रम था। पुस्तकालय स्थापना के

साथ साक्षरता के लिये हम प्रचार कर रहे थे और कुछ वालंटियर्स को चिन्हित करना चाहते थे जो स्थानीय स्तर पर मदद करें। साक्षरता और शिक्षा की बात करेंगे तो उसके साथ रोजगार और आर्थिक स्थितियों की बात भी आयेगी। बड़ी संख्या में लोग थे। सभा में सीमा और मेरे अलावा हमारे स्थानीय कार्यकर्त्ता भी थे। अध्यक्षता के लिये हमने ग्राम प्रधान को आमंत्रित किया था। यदि हमें अपने साक्षरता–शिक्षा के कार्यक्रम में ग्राम पंचायत को शामिल करना है तो ग्राम प्रधान को विश्वास में लेना जरूरी था हालांकि हमें मालूम था कि वे बड़ी जोत के किसान हैं तथा महाजनी भी करते हैं। बहरहाल, प्रधान जी ने अपने भाषण में फ़रमाया कि निरक्षरता और गरीबी का कारण मुसलमान हैं। वही रटा–रटाया पाठ कि एक–एक मुसलमान के चार बीवियाँ और एक–एक बीवी के दस बच्चे...।

जवाब देना ज़रूरी था। लगभग सौ परिवारों के गाँव में बमुश्किल आठ–दस घर मुस्लिमों के थे। मैंने प्रधान जी से कहा कि आप उन परिवारों के नाम बताइये... आज हम उनसे मिलकर उन्हें समझाने का काम भी करके जायेंगे। मेरे लगातार आग्रह करने पर भी उन्होंने किसी परिवार का नाम नहीं बताया। मैंने फिर कहा कि हम उनके साथ आस–पास के दो–चार और गाँवों का दौरा भी करेंगे... और ऐसे बयालीस सदस्यों वाले परिवारों को चिन्हित करेंगे। मेरा उग्र आग्रह देखकर प्रधान जी चुपचाप वहाँ से खिसक लिये। सीमा जो हमेशा बहुत शांत रहती थीं, उन्होंने मुझे भी शांत रहने के लिये कहा कि कहीं बात बढ़ जाने से मीटिंग न खराब हो।

हमने गाँव वालों के सामने उदाहरण भी रखा। सीमा के माता–पिता दोनों ही विश्वविद्यालय में पढ़ाते थे और उनके दो ही संतानें–सीमा और उसके एक भाई। मैं भी पढ़े–लिखे, प्रबुद्ध परिवार से थी लेकिन हम छह भाई–बहन। यह नज़ीर हम आगे भी ऐसी मीटिंगों में पेश करते रहे जहाँ गाहे–बगाहे इस तरह के सवाल उठे हैं। भारतीय समाज में लैंगिक अनुपात 1000 पुरुषों में 927 स्त्रियों का है। उ.प्र., बिहार, उड़ीसा जैसे प्रांतों में यह 900 से भी कम है जबकि संपन्न राज्यों दिल्ली, हरियाणा, पंजाब, चंडीगढ़ आदि में यह अनुपात घटकर 780 तक हो जाता है। बालिकाओं और स्त्रियों के कुपोषण तथा कन्या भ्रूण हत्या के चलते लगातार लैंगिक अनुपात कम हो रहा है जिसके कारण सामाजिक असंतुलन तो है साथ ही बंगाल, बिहार, उड़ीसा, झारखंड जैसे प्रांतों के पिछड़े–गरीब इलाकों से स्त्रियों–बालिकाओं का महानगरों की ओर पलायन महिला तस्करी के रूप में गंभीर समस्या पैदा कर रहा है। हरियाणा, पंजाब तथा उनकी सीमा से लगे राजस्थान, पश्चिमी उ.प्र. में कुछेक जातियों के सामाजिक समूहों के युवकों के लिये दुल्हनों का इसीलिये टोटा है और ''खरीदी हुई दुल्हनों'' वाले परिवार यहाँ खूब देखने को मिलते हैं। इसका कारण ही लगातार घटती स्त्रियों की

आबादी है। अब विभिन्न जाति और धर्म आधारित समूहों की सामाजिक संरचना पर कितने ही शोध हुए हैं, कितनी रिपोर्टें आई हैं जिनमें स्पष्ट है कि सामाजिक रहन–सहन का सबसे बड़ा नियामक उनका वर्गीय आधार है, जीवन–स्तर का आर्थिक स्वरूप है। पढ़ा–लिखा मध्यवर्ग, उच्च मध्यवर्ग किसी जाति–धर्म का हो, उनका रहन–सहन वर्गीय चेतना से संचालित होगा। जाहिर है इसमें संतानोत्पति के साथ परिवार का सीमित रूप और बच्चों की शिक्षा–दीक्षा, परवरिश भी शामिल होगी। आज मुस्लिम समाज में मध्यवर्ग भी बढ़ा है, महिलाएँ पढ़ लिखकर नौकरी कर रही हैं। वैश्वीकरण का प्रभाव सभी सामाजिक समूहों के साथ उन पर भी है। इसके साथ ही यह भी सच है कि गरीब, निर्धन वर्ग के लोगों के लिये परिवार नियोजन कोई मायने नहीं रखता है चाहे वह किसी जाति या संप्रदाय से हो। यह प्रत्यक्ष अनुभव हमारा अलीगढ़ के आसपास के ग्रामीण क्षेत्रों में भी रहा है और शहर के स्लम क्षेत्रों में भी। शहरों में रहने वाले निम्नवर्गीय श्रेणी के लोगों को अक्सर स्वयं सेवी संस्थाओं तथा सरकारी प्रचार तंत्र के जरिये परिवार नियोजन की सुविधा उपलब्ध हो जाती है और कुछ केसों में तीन–चार बच्चों के बाद ये श्रमजीवी महिलाएँ बार–बार की संतानोत्पति से निजात पा लेती हैं। ऐसा ज्यादातर उन्हीं घरों में ऐसा होता है जहाँ औरतें भी मेहनत मजदूरी कर रही हैं और बावजूद पति की असहमति और असहयोग के, किसी तरह इसे संभव कर पाती हैं।

मुस्लिम स्लम क्षेत्रों में स्थितियाँ भिन्न हैं। एक तो अनुपातिक रूप से मुस्लिम समाज में निम्नवर्ग का आकार बहुत बड़ा है। अशिक्षा और गरीबी सबसे ज्यादा है। सात–आठ साल के बच्चे मजदूरी पर लगा दिये जाते हैं। अलीगढ़ का उदाहरण लें। सभी गरीब और अशिक्षित परिवारों की यह मजबूरी है। अभी हाल के ताज़ा आँकड़ों में पहली बार यह स्वीकार किया गया है कि शहरी आबादी का भी लगभग बीस प्रतिशत गरीबी की रेखा से नीचे है।

यहाँ अलीगढ़ में 1991–92 के दंगों के बाद गाँव–देहातों से भाग–भागकर श्रमिक मुस्लिम समूहों को शहर के ग़ैर आबादी वाले जो हिस्से सुरक्षित लगे, वहीं समा गये। अलीगढ़ में पिछले बीस–बाइस सालों में यह अनपढ़ गरीब मुस्लिम आबादी कई गुना बढ़ गयी है। इन स्लम क्षेत्रों में मूलभूत जीवन सुविधाओं का भयानक अकाल है। कच्ची या फिर टूटी सड़कें, हर मौसम में जल भराव, नालियों की अनुपस्थिति, गंदगी का साम्राज्य यहाँ का स्थायी स्वरूप है। कुछ स्वयंसेवी संस्थाएं या व्यक्तिगत प्रयासों से शिक्षा के प्रबंध करने की कोशिश इन इलाकों में की जाती रही है। एक जमाने में हमारी संस्था के भी कुछ साक्षरता केंद्र वहाँ चले लेकिन जन सुविधाओं के अभाव में वहाँ काम करना भी मुश्किल रहा। ऐसे निर्धन समूहों को ही प्रतिनिधि मानकर कहा

जाय कि पूरे मुस्लिम समुदाय के लोगों में परिवार नियोजन नहीं है या हर परिवार में चार–पाँच बच्चे होना अनिवार्य है तो यह शरारतपूर्ण प्रचार है। गाँव–देहातों में तो अमूमन हमें परिवारों में अधिक बच्चे ही मिले और हर एक से यही जवाब मिला कि बच्चे तो ईश्वर की देन हैं अथवा अल्लाह की देन हैं। वहाँ एक बात और है–हिन्दू हों या मुसलमान, वे लड़कियों को अपनी औलाद में शामिल ही नहीं करते। बच्चों की संख्या का मतलब सिर्फ लड़कों तक सीमित है।

संयुक्त राष्ट्र की स्वास्थ्य संबंधी एक रिपोर्ट के अनुसार सबसे अधिक कुपोषित स्त्रियाँ और बच्चे हिन्दुस्तान में पाये जाते हैं। इस रूप में हिन्दुस्तान पिछड़े कहलाये जाने वाले अफ्रीकी देशों के साथ कतार में खड़ा नज़र आता है। उस रिपोर्ट के अनुसार स्त्रियों की उपेक्षा का कारण न सिर्फ औरत का समाज में दोयम दर्जा होना है बल्कि संतान के रूप में पुत्र–प्राप्ति का अदम्य आग्रह भी है। कन्या को जन्म देने के कारण स्त्री की हेठी होती है और अगर दो या तीन कन्याओं को जन्म देने के बाद भी अगर पुत्र न हुआ तो परिवार में उसे शारीरिक और मानसिक प्रताड़ना तो सहनी ही है, देखा गया कि प्रसव बाद उसे ठीक से भोजन–पोषण भी नहीं मिलता। उसी रिपोर्ट के अनुसार हिन्दुस्तान में सत्तर फीसदी महिलाएँ सामान्य रूप से तथा पचहत्तर फीसदी गर्भवती महिलाएं एनीमिया (लौहतत्व की कमी) से पीड़ित हैं। हमारे आसपास ही ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं जहाँ पुत्र प्राप्ति की कामना में पाँच–छह–सात तक कन्याओं ने जन्म लिया क्योंकि हमारे धर्मानुसार बिना पुत्र के मोक्ष प्राप्ति नहीं होती।

यह स्थितियाँ आम हैं। किसी से छिपी नहीं लेकिन अगर समाज को विखंडित करना, घृणा फैलाना ही उद्देश्य हो तो तर्क और बुद्धि का कोई काम नहीं है। तोगड़िया जी के किस गणित से यह तर्क सीधा बैठेगा। वैसे अब जो नया विज्ञान बन रहा है–उसमें नये गणित के सूत्र से हो सकता है यह समस्या सुलझा ली जाय। उन्हें मालूम नहीं या कि शरारतन समझना नहीं चाहते कि गरीब, श्रमजीवी तबके में, चाहे किसी धर्म का हो बच्चे ज़्यादा ही होते हैं। इसके अन्य अनेक कारण हैं। मध्यवर्ग और उच्च–मध्यवर्ग में यह स्थिति अलग है। धार्मिक अंधविश्वास भी निचले गरीब तबके के लिये बनाये गये हैं। उनके ही भरोसे आस्था की मीनार बनती है।

तकलीफ़ देह यह है कि इन घृणा के प्रचारक नेताओं, साधुओं, साध्वियों के प्रवचन–निर्देशों को अंजाम देने वाली जो ब्रिगेड बन रही हैं उनमें अधिकतर निम्नमध्यवर्ग के, कम पढ़े, ड्राप आउट्स, बेकार, बेरोजगार नौजवान हैं जिन्हें काम चाहिये, पहचान चाहिये। दिलचस्प बात यह है कि आज कुर्सी संभाले नेता हों या बयान बाजी करते सहयोगी भगवा संगठनों के नेता... इन सबकी संतानें विदेशों में पढ़ रही हैं, आधुनिक संस्थानों से डिग्रियाँ लेकर ऊँचे ओहदों पर हैं लेकिन आमजन के

नौजवानों को भ्रमित कर, अवैज्ञानिक तर्कों–कुतर्कों से लैस कर उनका जीवन नष्ट कर रहे हैं। एक जमाने में चुनाव लड़ने की पात्रता में संतानों की संख्या को शामिल करने की बात चली थी। उस समय सरकारी स्तर पर सीमित परिवार अभियान तेजी पर था। मुझे लगता है कि अब राष्ट्र भक्ति की इस नवीन अवधारणा के चलते चुनाव लड़ने की पात्रता के लिये कम से कम चार–पाँच संतानों का होना अनिवार्य कर देना चाहिये। यूँ भी हिन्दू धर्म के सिद्धांतों में स्त्री के समान अधिकार की कोई अवधारणा नहीं है। सन्तानोत्पति उसका धर्म है–कर्तव्य है। धर्मानुसार स्त्री पर पूर्ण अधिकार उसके पति का है। वह कितनी ही संतान चाहे... स्त्री की सहमति या असहमति कोई मायने नहीं रखती।

हिन्दू धर्म के पुरातन स्वरूप की पुनर्स्थापना के विचार के साथ ही हिन्दू समाज की स्त्रियों को इस बात के लिये तैयार रहना चाहिये कि पिछले लगभग दो सौ सालों में लंबे संघर्षों के फलस्वरूप जो पाया, मनुष्य के रूप में जीने का, लोकतांत्रिक व्यवस्था में समान अधिकार ग्रहण करने का जो अधिकार मिला उसे अब गंगा में तिरोहित करना है। मोदी जी बुलेट ट्रेन चलाकर विकास की गति तेज करना चाहते हैं। उनके ये भैये–छुटभैये समाज को दो सौ साल पीछे ले जाना चाहते हैं। हो सकता है वहाँ कोई पुष्पक विमान तैयार हो–आकाश में उड़ने के लिये।